ऐतिहासिक वस्तुनिष्ठता और सल्तनत काल में वस्तुनिष्ठ लेखन की समस्या

डा0 ऊषा देवी,

एसो0 प्रो0 इतिहास विभाग,
विद्यांत हिन्दू पी0जी0 कांलेज लखनऊ

'कॉलिंगवुड के अनुसार ''इतिहास मनुष्य की कृति'' है अतः अतीत कालीन मनुष्यों के कृत कार्यों को समझने के लिए इतिहास सूत्र प्रदान करता है। एक वैज्ञानिक से परे इतिहासकार घटना को प्रेरित करने वाली विचार प्रक्रिया पर ध्यान देता है । वस्तुतः समस्त इतिहास विचारों का इतिहास है ।अतः उसकी दृष्टि में ऐतिहासिक तथ्य कुछ नहीं है अपितु सब कुछ उसकी व्याख्या है। कॉलिंगवुड के अनुसार इतिहास को वस्तुतः एक चिंतन विधा के रूप में परिभाषित करना चाहिए। प्रत्येक विचार का स्वरूप ऐतिहासिक होता है इतिहास ही सच्चा ज्ञान है अतः यह अतीत के मानवीय कार्यों का अध्ययन है 'इसे यथार्थ की प्रस्तुति भी कहते हैं'' इतिहास की प्रस्तुति में कितनी यथार्थता है या वस्तुनिष्ठता है यह संदेह का प्रश्न है क्योंकि कोई भी अध्ययन या तो वस्तुनिष्ठ होता है या व्यक्तिनिष्ठ होता है। वस्तुनिष्ठ अध्ययन विशुद्ध विज्ञान की श्रेणी में आता है जिसके परिणाम सर्वमान्य व सार्वभौमिक होते हैं और व्यक्तिगत अध्ययन समाज विज्ञान की श्रेणी में आते हैं। इतिहास विज्ञान है या समाज विज्ञान यह विवादित विषय है इतिहास को विज्ञान मानने वालों के अनुसार इतिहास में वस्तुनिष्ठता पाई जाती है परंतु जो इस इतिहास को समाज विज्ञान मानते हैं उनके अनुसार इतिहास में वस्तुनिष्ठता नहीं होती क्योंकि इतिहास मानवीय गतिविधियों उसकी उपलब्धियों का विवरण है और इतिहासकार स्वयं एक मनुष्य है प्रयोगशाला नहीं। इतिहासकार पर प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है उस पर आंतरिक व वाह्य प्रभाव अवधारणा, दृष्टिकोण, वाद, संस्कृति, ईर्ष्या, द्वेष आदि के द्वारा पड़ते हैं । फलता वह सार्वभौम निष्कर्ष नहीं दे पाते। मार्क्स के अनुसार 'संस्कृतियों से परिष्कृत मनुष्य अपने ऐतिहासिक अध्ययन में उनसे अपने को अलग कैसे रख सकता है मनुष्य सामाजिक प्राणी है और अपने संस्कारों से जुड़ा हुआ है उसका जन्म, पालन पोषण, विकास, सामाजिक संस्कार व धार्मिक परिवेश में होता है अतः उस पर समाज संस्कार व धर्म का प्रभाव स्वभाविक है इतिहासकार इनसे मुक्त नहीं हो सकता ऐसी स्थिति में वैज्ञानिक विधा में आस्था रखने वाले इतिहासकारों को समाज से बाहर ऐतिहासिक वस्तुनिष्ठा ढूंढनी चाहिए।'' शिलर स्वीकार करते हैं कि 'ऐतिहासिक वस्तुनिष्ठा एक जटिल समस्या है'' ऐतिहासिक वस्तुनिष्ठा एक असंभव परिकल्पना है। जी एम ट्रैवल के अनुसार इतिहासकार में सहानुभूति एवं देशभक्ति का होना स्वाभाविक है वह अपने तथा सामाजिक रुचि के संदर्भ में अतीत के लोगों व उनके कार्यों एवं उपलब्धियों का वर्णन करता है । गार्डनर के अनुसार ''इतिहास का सारा स्वरूप वस्तुनिष्ठ नहीं हो सकता बल्कि उसके कुछ अंश को वस्तुनिष्ठ बनाया जा सकता है जैसे आर्थिक इतिहास।'' फिर भी इतिहास में वस्तुनिष्ठा का अपना महत्व है वस्तुतः इस के दो पहलू हैं एक तथ्य और दूसरा उसकी व्याख्या। इतिहास की व्याख्या तथ्यों के अनुरूप होनी चाहिए तथ्यों को व्याख्या के अनुरूप रखना चाहिए इसलिए डोनाल्ड बी0 ग्रैरेन्सिकी का कथन है कि ''वस्तुपरकता का अर्थ बिना व्यक्तिगत पक्षपात या पूर्वाग्रह के ऐतिहासिक तथ्यों का प्रयोग करना है।''

वस्तुनिष्ठा की कसौटी पर सल्तनत कालीन इतिहासकार खरे नहीं उतरते हैं । इस काल में अधिकांश इतिहासकार दरबारी एवं राजकीय संरक्षण प्राप्त करके उनके कृपा पात्र थे । वे जब दरबार के बाहर की घटनाओं का वर्णन करते हैं तो वह परोक्ष रूप से सल्तनत की शक्ति से प्रभावित रहते थे । सल्तनत कालीन उपलब्ध ऐतिहासिक ग्रंथों से ज्ञात होता है कि दिल्ली दरबार ही समकालीन इतिहासकारों के लिए घटना का केंद्र रहा। इस काल के राजनीतिक परिवेश में सुल्तान एवं उमरा वर्ग के साथ उनके संबंध इतिहासकार की अभिरुचि का केंद्र होते थे और इसी के अनुरूप उसका इतिहास लेखन चलता था। प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से दिल्ली दरबार से संबंधित होने के कारण इस काल के इतिहासकारों का दृष्टिकोण वस्तुपरक नहीं रह गया है। अभिजात वर्ग का होने के कारण उनका इतिहास लेखन सुल्तान एवं अभिजात वर्ग के इर्द–गिर्द ही घूमता है और सामान्य जन उनके इतिहास से परे हैं । इस कारण उनका इतिहास मुट्ठी भर लोगों का इतिहास बनकर रह गया है । सामान्यता सल्तनत काल में इतिहासकार इस्लाम परस्त थे अतः हिंदू बहुल समाज उनकी कलम की पकड़ से बाहर रहा है । इसमें संदेह नहीं है कि इस काल के इतिहासकार अपना लेखन हदीस के आधार पर करते थे उनकी दृष्टि में इतिहासकार को हदीस का ज्ञान होना आवश्यक है । धार्मिक रंगों में डूबे इन इतिहासकारों की कृतियां एक पक्षीय रह गई हैं वह वस्तुपरक नहीं है उनका इतिहास मात्र राजनैतिक इतिहास रह गया है सामाजिक एवं आर्थिक स्थितियां उनकी कलम से छूट गयी हैं । इसी कारण उनका इतिहास आधा अधूरा रह गया है इस अधूरेपन को पूरा करने के लिए क्षेत्रीय इतिहास लेखन एवं उनकी परंपराओं को देखना भी आवश्यक हो जाता है । सल्तनत कालीन इतिहासकारों का ऐतिहासिक वस्तुपरकता के प्रति दृष्टिकोण उनकी कृतियों एवं लेखन से ज्ञात होता है जैसे–

हसन निजामी की कृति 'ताजुल मआसिर'' से ज्ञात होता है कि यह पुस्तक इस्लाम धर्मावलंबी पाठकों के लिए है क्योंकि वह स्वयं हदीस और इस्लाम धर्मावलंबी था इसी कारण उसकी रचना इस्लामी मान्यताओं से प्रभावित है। पुस्तक के प्रारंभ में ही वह खुदा, मोहम्मद साहब और खलीफा की प्रशंसा करता है और गैर मुस्लिमों के साथ युद्ध (जेहाद) मुस्लिम शासकों के लिए अनिवार्य समझता है । उसके अनुसार जिहाद का वर्णन कुरान में है और राजत्व व इस्लाम एक दूसरे के पूरक हैं। इसी कारण मोहम्मद गोरी को काफिरों और बहू देवपूजको का विनाशक मानता है। वह मुस्लिम विजेताओं को अच्छा मुसलमान समझता है उनकी विजयों का वर्णन बड़े उत्साह से करता है जैसे यह उसकी ही विजय हों । वह जिहाद में मरने वाले मुसलमानों को स्वर्ग जाने और हिंदुओं के नरक में जाने का वर्णन करता है। उसका इतिहास 1191 की घटना से शुरू होता है जबकि तराइन के युद्ध में मोहम्मद गोरी बुरी तरह से हारा था पर इस दरबारी इतिहासकार ने इस पराजय का संकेत भी नहीं दिया है किंतु इसमें तराइन के द्वितीय युद्ध को पूर्व पराजय का बदला लेने के निश्चय के रूप में प्रदर्शित करता है। गोरी की मृत्यु के बाद भी लिखता है कि गजनी का राज ताजुद्दीन एल्दौज को प्राप्त हुआ और हिंदुस्तान का राज्य कुतुबुद्दीन ऐबक के अधीन आ गया और सिक्का दिरम व दीनार दोनों ही उसके नाम से सुशोभित हुए। जतवन की पराजय का उल्लेख करते हुए लिखता है कि वह दुर्गुणों और उत्पातों का मूल था कुफ्र और उल्टी बुद्धि का आधार तथा लज्जा का साथी था । हरिराज के विद्रोह को वह बुद्धि की मूर्खता और शैतान का प्रभाव समझता है जो शासक मुसलमान शासकों की अधीनता स्वीकार कर लेते हैं वह उनकी बुद्धि की सराहना करता है। प्रथम तराइन के युद्ध में मोहम्मद गोरी पृथ्वीराज से पराजित हुआ था किंतु निजामी इसका उल्लेख

नहीं करता कदाचित इससे उसके संरक्षक नाराज होते अथवा वह स्वयं भी अपने नायक की पराजय की कल्पना नहीं करना चाहता था। युद्ध में मृत तथा बंदी बनाए गए हिंदुओं की संख्या का तो उल्लेख करता है किंतु कितने मुसलमान सैनिक इस युद्ध में बंदी बने या मारे गए इनका आंकड़ा नहीं देता। इस प्रकार के उदाहरण से हसन निजामी के संकुचित असहिष्णु व कट्टरपंथी इस्लामी मान्यताओं पर आधारित एक पक्षीय दृष्टिकोण स्पष्ट हो जाता है। यदि उसे लेखक के रूप में लिया जाए तो तुर्कों की भारतीय विजय का लक्ष्य धर्म युद्ध और गैर मुसलमानों की हत्या हिंदू धार्मिक स्थानों का विध्वंस और उनके स्थान पर मस्जिदों का निर्माण रह जाता है जो वास्तविक सत्य नहीं है ।

''तबकात–ए–नासिरी'' का लेखक मिनहाज उस सिराज सल्तनत काल का प्रमुख इतिहासकार रहा है उसकी रचना फारसी भाषा में, गद्य में लिखी गई, सुल्तान नसरुद्दीन को समर्पित है। इसमें अरब इस्लामी राज्य वंश मालिकों एवं सुल्तानों का इतिहास है इसे 1259 में वह लिखना आरंभ करता है और महमूद के काल में पूर्ण होती है। यह 23 अध्याय में लिखी गई है। मिनहाज स्वयं लिखता है कि ''प्रसन्न होकर सुल्तान ने उसे एक राजसी वस्त्र अपने कंधे से उतार कर जानवर की बालदार खाल और एक गांव उसे पारितोषिक के रूप में दिया था। इसके अतिरिक्त 10000 जीतल मासिक वेतन भत्ता देने की आज्ञा दी।" उलूग खां (बलबन) ने भी उसे सद्रजहां नियुक्त किया तथा अन्य उपहार दिए इसी कारण मिन्हाज ने बलवन को दी गई प्रति पर उसकी प्रशंसा में एक कविता लिख दी थी । तबकात ए नासिरी प्रधानतया एक राजनीतिक इतिहास है । वह प्रथम इतिहासकार है जिसने कहा है कि ऐबक ने अपने नाम की मुद्राएं प्रसारित की और खुत्वा पढ़वाया। उसकी प्रशंसा में वह लिखता है कि "इस देश में प्रचलित धन कौड़ी व जीतल नहीं है इसलिए उसका छोटे से छोटा दान भी एक लाख कौड़ी होता था। वह कहता है कि उसका दान भी लाखों तक और रक्तपात भी लाखों की संख्या तक पहुंच जाता था। वह अपने समय का हातिम था और उसे लाखबख्श भी कहा जाता था।" मिनहाज एक परंपरावादी कट्टर मुसलमान था। वह किसी भी व्यक्ति की जो रूढ़िवादी परंपरा से अलग विचार प्रकट करता था उसकी कटु आलोचना करता है। इसका प्रभाव उसके इतिहास लेखन पर पड़ा है वह धर्म शास्त्र का ज्ञाता, कुशल वक्ता, दिल्ली के राजनीतिक व धार्मिक क्षेत्र में अपने समय का आदरणीय व्यक्ति माना जाता था । 1228–60 ईस्वी तक दिल्ली के सुल्तानों तथा राजनीतिक गतिविधियों से उसका निकटतम संपर्क रहा 1231–32 ईसवी में ग्वालियर पर आक्रमण किया तब सुल्तान ने उसे शिविर में तजकीर (प्रवचन) देने के लिए नियुक्त किया। वह स्वयं लिखता है कि प्रत्येक सप्ताह में तीन बार तजकीर किया करता था। रमजान के महीने में उसने प्रतिदिन तजकीर की। शिविर में उसने 95 तजकीरें की।

ईद उल जुहा के दिन ग्वालियर के किले के सामने मिनहाज ने नमाज पढ़ाई और इल्तुतमिश के नाम पर खुत्वा पढ़ा। 1233 ईस्वी में ग्वालियर के दुर्ग पर अधिकार करने के पश्चात सुल्तान ने मिनहाज को ग्वालियर का काजी (धर्म उपदेशक) इमाम (धार्मिक कार्यों का अध्यक्ष) और मुहतसिब (इस्लामी नियम के अनुसार नैतिकता का पालन कराने वाला अधिकारी) नियुक्त किया और उसे बहुमूल्य वस्त्र प्रदान किये। सूफी संतों में भी उसका आदर होता था। निजामुद्दीन औलिया प्रत्येक सप्ताह उसका प्रवचन सुनने जाते थे, वह समसामयिक व्यक्ति ही नहीं था बल्कि समकालीन राजनीतिक घटनाओं का प्रत्यक्षदर्शी था। उसने घटनाओं में भाग लिया था, उलेमाओं व सुल्तानों से उसका व्यक्तिगत संबंध था। वह स्वयं राजसी कर्मचारी था इन कारणों से इतिहास कृति में उसका पूर्वाग्रह स्पष्ट हो जाता है।

जियाउद्दीन बरनी सल्तनत कालीन प्रमुख इतिहासकार रहा है। समकालीन भारतीय मूल का प्रथम मुस्लिम इतिहासकार जिसका जन्म बरन आधुनिक बुलंदशहर में हुआ। अलाउद्दीन खिलजी के साथ उसके पिता तथा चाचा के निकट संपर्क होने पर भी बरनी को कोई राजसी पद प्राप्त नहीं हो सका। किंतु उसका दरबार के प्रमुख उमरावों तथा अधिकारियों से निकट संबंध बना रहा। मोहम्मद बिन तुगलक के राजत्व काल के दसवें वर्ष में 51 वर्ष की आयु में वह दरबार में नाजिम नियुक्त हुआ और इसके पश्चात तुगलक के जीवन पर्यंत 17 वर्ष 3 महीना उसका विश्वास पात्र बना रहा और सुल्तान मोहम्मद बिन तुगलक पारितोषिक के रूप में उसे धन प्रदान करता था। यह काल उसके जीवन का स्वर्ण काल था किंतु मोहम्मद बिन तुगलक की मृत्यु के पश्चात उसके जीवन में परिवर्तन हुआ। फिरोज शाह तुगलक द्वारा दिल्ली पर अधिकार करने के पश्चात उसे भटनेर दुर्ग में 5 महीने बंदी के रूप में जीवन व्यतीत करना पड़ा उसने अपने ग्रंथ में इस कष्ट का वर्णन किया है वह लिखता है कि "मैं इस "तारीख ए फिरोजशाही" का संकलनकर्ता जियाउद्दीन बरनी स्वर्गवासी सुल्तान मोहम्मद बिन तुगलक के निधन के पश्चात नाना प्रकार के कष्टों से ग्रस्त हो गया मेरे घोर शत्रु तथा मेरे प्राणों का अहित चाहने वालों एवं ईर्ष्यालुओं ने मेरी हत्या का प्रयत्न किया। शत्रु ने मुझे विक्षिप्त बना दिया। सहस्त्रों प्रकार के विषैली बातें संसार के स्वामी फिरोज शाह तुगलक तक पहुंचा दी। बरनी लिखता है उफ क्या अच्छा होता कि मैं बुरे दिनों को देखने के लिए जीवित ही ना रहा होता, मेरे पास कुछ भी नहीं है, और ना मुझे अब कहीं से धन ही प्राप्त होता है।''

इस विपन्न अवस्था में भी उसने 7 ग्रंथों की रचना की जिसमें तारीख ए फिरोजशाही और फतवा ए जहां दारी प्रमुख है जिसके कारण एक इतिहासकार के रूप में उसकी ख्याति स्थापित हुई। वह यह ग्रंथ लिख कर तत्कालीन सुल्तान फिरोज शाह तुगलक को प्रसन्न करना चाहता था। फिरोज के काल में अपने बुरे दिनों के लिए बरनी अपने को दोषी समझता है क्योंकि उसने मोहम्मद बिन तुगलक के इस्लाम विरोधी कार्यो से उसके जीवन काल में उसे सचेत नहीं किया। इस पुस्तक को लिखकर वह अपने पापों का प्रायश्चित ही नहीं करना चाहता था वरन तत्कालीन सुल्तान फिरोजशाह तुगलक को प्रसन्न करना चाहता था। उसे आशा थी कि इस ग्रंथ से उसे प्रसिद्धि प्राप्त होगी। बरनी के यह व्यक्तिगत विचार उसकी वस्तुनिष्ठता पर प्रश्नचिन्ह लगाते हैं। गयासुद्दीन तुगलक की आकस्मिक मृत्यु राजकुमार उलूग खां के सुनियोजित षड्यंत्र का परिणाम थी। परंतु प्रत्यक्षदर्शी इतिहासकार बरनी ने केवल इतना ही लिखा है कि अल्लाह सत्य को जानते हैं। आधुनिक शोधकर्ता बरनी की परिस्थिति, उद्देश्य और मनः स्थिति के आधार पर इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि वह यथार्थ लिखकर सुल्तान फिरोजशाह तुगलक को असंतुष्ट नहीं करना चाहता था ।

किंतु एक इतिहासकार के रूप में बरनी जहां इतिहासकार के लिए धर्मनिष्ठ होना आवश्यक बताता है वहीं वह स्वयं सत्य धर्म के क्षेत्र में अतिवादी है । फतवा ए जहांदारी में उसने हिंदुओं के प्रति दूषित विचार रखते हुए लिखा है कि "महमूद यदि एक बार और हिंदुस्तान की ओर आता तो समस्त हिंदुस्तान के ब्राह्मणों को जो कुफ्र और शिर्क के आदेशों को दृढ़ बनाने का साधन है तलवार के घाट उतार देता है और लगभग दो सौ, तीन सौ हजार हिंदू नेताओं की गर्दन कटवा देता। जब तक समस्त हिंदुस्तान इस्लाम स्वीकार नहीं कर लेता और समस्त कलमा नहीं पढ़ लेता वह हिंदुओं की हत्या करने वाली तलवार को म्यान में नहीं रखता" बरनी देश की बहुसंख्यक हिंदू प्रजा का घोर विरोधी था। फतवा –ए –जहांदारी और तारीख– ए –फिरोजशाही में उसने समझाने का प्रयत्न किया है कि हिंदुओं को पूर्ण रूप से दरिद्र बना दिया

जाए। इस प्रकार के विचार इतिहासकार पर जाति व धर्म का प्रभाव प्रदर्शित करते है ।

बरनी सल्तनत काल का सर्वश्रेष्ठ महत्वपूर्ण इतिहासकार है किंतु उसके विचारों में, लेखन में पूर्वाग्रह पक्षपात, परंपरागत कट्टर इस्लामी दृष्टिकोण है। बरनी इतिहास और हदीस को समतुल्य मानता है उसका विश्वास था कि एक इतिहासकार को सदैव सत्य का वर्णन करना चाहिए तभी वह मृत्यु के पश्चात ईश्वर को अपना मुख दिखा सकता है किंतु उसकी वस्तुनिष्ठता उसके लेखन में अन्य मध्यकालीन इतिहासकारों की भांति ही दिखाई देती है । प्रोफेसर मकबूल हसन के अनुसार "मध्यकालीन इतिहासकार दरबार से संबंध रखते थे उन्होंने वही लिखा जो उन्हें उपयुक्त अनुभव हुआ और अपने संरक्षकों को उनकी प्रशंसा के लेखों तथा काव्यों से संतुष्ट किया।'' इलियट उसे "पक्षपाती" एवं डाउसन ने उसे "गलत तिथियों का अव्यवस्थित लेखक" माना है। पी0 हार्डी "बरनी के इतिहास को इस्लामी धर्मशास्त्र का एक अंग तथा भूत को बुराई तथा अच्छाई के बीच का संघर्ष समझाने वाला मानता है ।'' मोहम्मद बिन तुगलक प्रथम सुल्तान था जिसने बरनी को राजसी पद दिया। वह मोहम्मद बिन तुगलक की वैधता, ज्ञान, साहस और बुद्धि से प्रभावित था किंतु उसकी गैर मुसलमानों के प्रति उदारता, न्याय करते समय मुसलमानों को दंडित करना, भारतीय मूल के एवं निम्न वर्ग के लोगों को राजसी पद देना और शरीयत के अनुकूल शासन ना करना उसे विचित्र सा लगता है उसके कार्य को वह एक "कट्टर मुल्ला" की दृ ष्टि से देखता है और आलोचना करता है किंतु सुल्तान फिरोजशाह तुगलक के विषय में 11 अध्यायों में लिखता है और फिरोज की बार–बार धर्म परायणता व इस्लाम के प्रति निष्ठा की प्रशंसा करता है वह लिखता है कि दिल्ली के सिंहासन पर सुल्तान मुईजुद्दीन मोहम्मद साम के अतिरिक्त कोई भी बादशाह फिरोज के समान सिंहासनारुढ़ नहीं हुआ। वह फिरोज के समकालीन रहा है उसने फिरोज की प्रशंसा इसलिए की है क्योंकि वह उसके विचार एवं विश्वासों के अनुकूल था। बरनी उच्च वंश तथा नस्लवाद का समर्थक था। साधारण वर्ग के प्रति उसकी रुचि नहीं है यही कारण है कि वह स्वयं को वस्तुनिष्ठ इतिहासकार नहीं बना पाता किंतु फिर भी उसका इतिहास महत्वपूर्ण है।

शम्स शिराज अफीफ एवं उसकी ऐतिहासिक रचना "तारीख ए फिरोजशाही" इसमें अफीफ ने सुल्तान फिरोजसाह तुगलक के संपूर्ण राजत्व काल का इतिहास बताया है उसकी कृति मात्र सुल्तान फिरोजशाह पर आधारित है। इसमें फिरोजशाह तुगलक की जन्म से लेकर मृत्यु तक का विवरण विभिन्न अध्यायों में दिया गया है वह सुल्तान फिरोजसाह की धर्मनिष्ठा से अत्यधिक प्रभावित था। स्वयं भी अपने समकालीन सूफी संतों का मुरीद था। वह फिरोजसाह तुगलक को एक आदर्श मुस्लिम शासक के रूप में प्रस्तुत करता है उसने केवल युद्ध और अभियानों का ही वर्णन नहीं किया है अपितु सुल्तान के शासनकाल की अन्य महत्वपूर्ण घटनाओं, उसके शासन प्रबंध का भी विवरण दिया है। उसके इतिहास से समकालीन सामाजिक तथा आर्थिक दशाओं के विषय में स्पष्ट संकेत मिलते हैं। फिरोज की प्रशंसा में उसने किसी ना किसी ढंग से उसके दुर्गणों को ढकने का प्रयास किया है अफीफ का लेखन पूर्णतया मध्यकालीन इस्लामी इतिहास लेखन से प्रभावित है। वह सूफी संप्रदाय चिश्ती सिलसिला में दीक्षित था और उसका विश्वास था कि संसार में सब कुछ उसकी इच्छा, अल्लाह की इच्छा तथा संतों की कृपा पर निर्भर है। अफीफ की धार्मिकता उसके लेखन से झलकती है। फिरोज के शासनकाल की 40 साल की अवधि में वह भी शासन से अनौपचारिक रूप से जुड़ा हुआ था

स्वयं इस्लाम धर्म में पूर्ण आस्था तथा सूफी मतावलंबी होने के कारण वह फिरोज की

धार्मिक नीति के प्रति विशेष रूप से आकर्षित था फिरोज के राज्य प्रशासन की यश व सम्मृधि की बहुत प्रशंसा करता है वह स्वयं लिखता है कि "ऐसे सुल्तान की यश गाथा को चित्रित करना मेरा कर्तत्य था।"

अफीफ की तारीखें फिरोज 'शाही 90 अध्याय में लिखी गई है जिन्हें पांच भागों में विभाजित किया गया है और प्रत्येक भाग में 18 अध्याय है । तारीखे , फिरोजशाही केवल एक शासक फिरोज'शाह तुगलक के राजत्व काल 1351 से 1388 ईसवी तक की उपलब्धियों का इतिहास है इस दृष्टि से डा0 मेंहदी हुसैन "इसे फिरोज'शाह पर लिखा गया एक निबंध कहते है।" पी0 हार्डी के अनुसार "यह फिरोजशाह तुगलक की गुण गाथा का व.र्णन है।''उसने अपनी पुस्तक का नाम 'मनाकिवे फिरोज तुगलक" रखा था मनाकिब शब्द मुस्लिम साहित्य में सूफी सिलसिला के संस्थापक के लिए प्रयुक्त किया जाता है। फिरोज के प्रति अफीफ की प्रशंसात्मक भावना धार्मिक पूर्वाग्रह से ग्रस्त है। उसका लेखन पूर्णतयः मध्यकालीन ऐतिहासिक इतिहास लेखन परंपरा से प्रभावित है इसी कारण अतहर अब्बास रिजवी ने लिखा है कि "वह अपने इतिहास में सुल्तान फिरोजशााह तथा उसके अधिकारियों का विवरण देते हुए कहीं–कहीं इतिहासकार की निष्पक्षता को भूल जाता है और इस ओर विशेष ध्यान नहीं देता। उसने घटनाओं को बिना किसी विवेचना के बड़ें सहज रूप में स्वीकार कर लिया है।" हेरंब चतुर्वेदी लिखते हैं कि "अफीफ का इतिहास लेखन हालांकि असंतोष तथा कुंठा से प्रभावित नहीं है फिर भी ऐतिहासिकता तथा वस्तुपरक इतिहास लेखन के दृष्टिकोण से उसमें कुछ दोष स्पष्टता उभर आते हैं क्योंकि वह धार्मिक था अतः उसके विवरणों में धार्मिक प्रभाव स्पष्ट है। वह सुल्तान फिरोजशाह तुगलक एवं उसकी असहिष्णुता को धार्मिक दृष्टि से देखते हुए उचित एवं तार्किक ठहराता है और उसे एक आदर्श मुस्लिम सुल्तान के रूप में प्रस्तुत करता है।''

अमीर खुसरो एक कवि, इतिहासकार और संत था। वह धर्म भीरु, सूफी विचारों से पूर्णतया प्रभावित मुसलमान था। उसका ऐतिहासिक दर्शन भी उसके विचारों से प्रभावित था। सभी सुल्तानों में यद्यपि गुण एवं दोष थे किंतु अमीर खुसरो केवल उनको गुणों को देखता है और बुराइयों को नहीं। वह सब कुछ ईश्वर के अधीन मानता है मिफ्तह– उल– फुतुह में वह लिखता है कि "मैं गलत बात लिखना चाहता था लेकिन मेरे हाथ रुक गए क्योंकि झूठी बात कविता को सुंदर बना सकती है किंतु सत्य एक प्रशंसनीय एवं अद्वितीय वस्तु है।'' इससे खुसरो का महत्व बढ़ जाता है किंतु उसकी रचनाएं एक कवि की रचनाएं हैं या इतिहासकार की, यह विशेष बात है। इसका इतिहास लेखन वृहद है समाज के प्रत्येक पहलू को छुआ है किंतु वह एक दरबारी कवि और इतिहासकार है और उसकी रचनाएं इससे प्रभावित दिखाई देती है । वह स्वयं कहता है कि उसने ऐतिहासिक विषयों पर किसी के कहने पर या सुल्तानों को भेंट देने एवं उन्हें प्रसन्न करने के लिए लिखा है । खुसरो मूलतः कलाकार था इतिहासकार नहीं। अतः उसके इतिहास लेखन में साहित्य की झलक का मिलना स्वाभाविक है । वह अपनी कल्पना से जहां धर्म कला और साहित्य में सौंदर्य की सर्जना करता है वहीं इतिहास में दिव्य सौंदर्य की खोज का प्रयास करता है। खुसरो का कथन था कि वह जीवन के सत्य को बताने के लिए इतिहास नहीं लिखेगा। कवि होने के कारण उसकी लेखनी में इतिहास का रूखापन नहीं अपितु काव्यपरक रसात्मकता देखने को मिलती है । हमें सुल्तान अलाउद्दीन खिलजी के मालवा विजय के वर्णन में उसका काव्य सौंदर्य की झलक इस प्रकार मिलती है– "जब विजयी सेना ने बरछों से रायों और जमींदारों की आंखों में सुरमा डाला तो उन्होंने अपनी साहस और उद्दंडता छोड़ दी। ताकि उन

पर तुर्कों के पत्थर तोड़ देने वाले तीरों की मार ना पड़े और वह आंखें खोलकर सुल्तान के भव्य चौखट पर आएं ।'' इसी प्रकार चित्तौड़ विजय के विषय में भी लिखता है कि– "जिस दिन पीले चेहरे वाले राज्यों ने हरी तलवारों के भय से लाल दरबार में शरण ली तो सुल्तान और अमीर गुस्से से लाल हो गए ।'' खुसरो के अलंकारिक भाषा में घटनाओं का वर्णन मिलता है उसमें ऐतिहासिक वस्तुनिष्ठता की प्रमाणिकता संदिग्ध होती है।

दक्षिण में वारंगल की विजय के संबंध में खुसरो कहता है कि "वारंगल विजय के संबंध में मैं इस प्रकार से लिखूंगा कि कल्पना के पैर मेरी लेखनी का पीछा करते–करते लंगड़ा हो जाए ।'' वहां के मार्ग का वर्णन करते हुए कहता है "कि मार्ग सितार के तार से भी अधिक पतला था और माशूका के जुल्फों से भी अधिक काला थां '' उसकी अलंकारिक भाषा इतिहास में उसके ललित गत शैली का द्योतक है खुसरो अरबी फारसी, तुर्की और संस्कृत भाषा का ज्ञाता था। वह भारत की क्षेत्रीय भाषाओं से भी परिचित था उसने अपने लेखन में मिश्रित भाषा देहलवी जिसे हिंदवी भी कहा गया, का प्रयोग किया। वह कलाकार के नाते संगीत प्रेमी भी था खुसरो को सितार एवं तबले का जनक माना जाता है । सांस्कृतिक समन्वय का प्रभाव उसकी कला एवं लेखन में दिखाई देता है। खुसरो ने अपनी कलम से इतिहास अवश्य लिखा है पर इतिहासकार होने का दावा नहीं किया । ,खुसरो के द्वारा लिखित रचनाओं की संख्या 100 के आसपास बताई जाती है जिनमें कुछ महत्वपूर्ण रचना, ंकिरान उस सैदिन ('शुभ नक्षत्रों का मिलन), मिफता–उल–फुतूह, खजाइन–उल–फुतूह (विजयों का कोष), आशिका (देवल रानी खिज्र खां), नूह सिपेहर (नौ आकाश) और तुगलकनामा ही उपलब्ध है। तुगलकनामा खुसरो की अंतिम ऐतिहासिक रचना (मसनवी) है खुसरो लिखता है कि उसने यह ग्रथ गयासुद्दीन तुगलक के कहने से लिखा है इसमें उसने मुबारकसाह की चरित्रतहीनता, खुसरों खां द्वारा सल्तनत का हस्तान्तरण, मुबारक खां खिलजी के भाइयों की हत्या आदि का बड़ा ह्रदयविदारक वर्णन है। उसकी रचनाओं में उसकी व्यक्तिगत भावनाओं और अभिरुचियों का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है जिसके कारण वस्तुनिष्ठता की समस्या उत्पन्न होती है।

अब्दुल मलिक इसामी सल्तनत कालीन प्रमुख इतिहासकार, ऐतिहासिक रचना "फुतूह–उस–सलातीन, में वह स्वयं को इस्लाम धर्म का अनुयाई बताता है। वह लिखता है कि खुदा के नियम रहस्यमय हैं और मनुष्य अपने भाग्य के खेल को नहीं समझ सकता। वह अपने लेखन में इस्लामी आदर्श उपस्थित करता है । भारत में इस्लाम के प्रचार एवं मुसलमानों की उपलब्धियों पर वह गौरवान्वित होता है जो दिल्ली सुल्तान उसके अनुकूल चलते हैं वह उसकी सराहना करता है और जो गैर मुसलमानों के प्रति उदारता दिखाते हैं उन्हें वह इस्लाम द्रोही मानता है। इसी दृष्टिकोण से वह मोहम्मद बिन तुगलक की नीतियों की बार बार आलोचना करता है। प्रोफेसर पी0 हार्डी इस संबंध में लिखते हैं कि "फुतूह उस सलातीन की रचना विश्व के इस्लामी ढांचे में की गई है जिसके अनुसार ईश्वर को जानने का सत्य एवं उपयुक्त मार्ग केवल इस्लाम धर्म ही है।'' दक्षिण भारत में रहते हुए इसामी ने वहां की स्थिति वं विद्रोह के विषय में लिखा है उसने अपना ग्रथ अपने सुल्तान अलाउद्दीन बहमनशाह को समर्पित किया है। वह वास्तव में मोहम्मद तुगलक से असंतुष्ट लोगों का प्रतिनिधि जैसा है वह तुगलकों से निराश ,वं खिन्न था। इसामी के लेखन के संबंध में कहा जाता है कि "वास्तव में फुतूह उस्सलातीन ,एक निराश, अवसाद ग्रस्त दिमाग का लेखन है।" इसामी का दृष्टिकोण धार्मिक है वह अपने लेखन में इस्लामी आदर्श उपस्थित करता है।

"फुतूहाते फिरोजशाही" यह फिरोज शाह तुगलक की आत्मकथा है । इसके प्रारंभ में वह लिखता है कि "हिंदुस्तान में बहुत से लोग मोहम्मद साहब के दर्शाए गए मार्ग का उल्लंघन कर रहे हैं, खुदा ने उसे इसीलिए सुल्तान बनाया है कि वह इन बुराइयों को दूर कर सके ।" वह इसी पुस्तक में आगे लिखता है कि उसे खलीफा के दरबार से एक स्वीकृति पत्र प्राप्त हुआ जिसमें उसे सैयदुस्सलातीन((सुल्तानों के नेता) की उपाधि देते हुए उसे खिलअत, चादर, पताका, अंगूठी, तलवार तथा मोहम्मद साहब के पांव की छाप उपहार में दी गई। इससे उसे बड़ा गौरव और प्रतिष्ठा प्राप्त हुई। इसे पढ़ने वालों से वह आशा करता है कि "वह समझ लेंगे कि ''इस्लाम एक उत्कृष्ट धर्म है और इसका पालन कर पुण्य को प्राप्त कर किया जा सकता है।" अपने लिए वह लिखता है कि इस मार्ग को दर्शाने के कारण उसका भी कल्याण होगा। फिरोज ने हिंदुओं को इस्लाम धर्म स्वीकार करने को प्रोत्साहित किया, उसने घोषित कर दिया कि जो हिंदू इस्लाम धर्म स्वीकार कर लेगा उन्हें जजिया नहीं देना पड़ेगा। वह लिखता है, कि "जब यह घोषणा सर्वसाधारण के कानों में पड़ी तो हिंदुओं की बहुत बड़ी बड़ी रैलियां आकर मुसलमान होने लगीं। फिरोज ने उन्हें किल्लत से सम्मानित किया था।"

वास्तव में फिरोज अपने को आदर्श मुसलमान प्रमाणित करना चाहता था। उसका उद्देश्य उन सभी कार्यों को बंद करना था जो शरीयत के विरुद्ध थे और ऐसे कार्य करने वालों को वह अपनी आत्मकथा में विधर्मी कहता है। मेहंदी हुसैन का कथन है कि " इसमें फिरोज के मस्तिष्क एवं कार्यों की तस्वीर मिलती है जिसके द्वारा स्वयं को आदर्श मुसलमान घोषित करता है।" इस प्रकार यह भी वस्तुनिष्ठता की श्रेणी में खरा नहीं उतरता और वह कहीं ना कहीं अपने धार्मिक दृष्टिकोण और मनोस्थिति से विवश दिखाई देता है।

मध्यकालीन प्रमुख इतिहासकार इब्नबतूता का एतिहासिक यात्रा विवरण ग्रंथ रहेला 14वी शताब्दी के भारतीय इतिहास के लिए अत्यधिक उपयोगी है मेहंदी हुसैन ने इसे "सूचनाओं की खान" कहा है। इसमें भारत की भौगोलिक स्थिति के साथ ही साथ यहां की जलवायु, फल–फूल ,पशु–पक्षी, वेश–भूषा, रहन––सहन कृषि–व्यापार, यातायात, नगर, शासन प्रबंध, दरबार, दरबार के नियम, अधिकारी, डॉकव्यवस्था, खान–पान मनोरंजन, आमोद–प्रमोद, वैदेशिक संबंध आदि घटनाओं का विस्तृत वर्णन किया है। इब्नबतूता का इतिहास विश्वसनीय और वस्तुनिष्ठता के समीप माना जा सकता है किंतु कहीं कहीं घटनाओं का विवरण अतिशयोक्तिपूर्ण है जो संदेह उत्पन्न करता है जैसे राजधानी परिवर्तन और दिल्ली की दुर्दशा का वर्णन।

तारीख–ए–मुबारकशाही का लेखक याहिया बिनअहमद अब्दुल्ला सरहिंदी सुल्तान मुबारक शाह सैयद का समकालीन था । वह स्वयं लिखता है कि उसने इस कृति का नाम तारीखें मुबारक शाही इस आशा से रखा कि यदि सुल्तान ने इस समर्पण को स्वीकार कर लिया तो उसे धन एवं वैभव प्राप्त होगा इससे प्रतीत होता है कि याहिया का लक्ष्य मुबारक शाह को प्रसन्न कर लाभ प्राप्त करना था। इलियट के अनुसार "यह मूलतः एकपक्षीय घटनाओं का वर्णन करता है, उसे इतिहासकार नहीं कहा जा सकता।" अतीत के वर्णन में उसका दृष्टिकोण ईश्वर की इच्छा पर आधारित रहता है याहिया का सारा ग्रथ इस्लाम धर्म के ढांचें में लिखा गया है ।,कुतुबुद्दीन ऐबक का घोड़े से गिर कर मरना, ताजुद्दीन ,एल्दौज के विरुद्ध इल्तुतमिश की विजय आदि को वह ईश्वर या अल्लाह की मर्जी मानता है। सल्तनत काल के प्रायः सभी इतिहास लेखक इस्लाम के अनुयाई थे जिसके कारण उनके लेखन में पूर्वाग्रह एवं कट्टरपन मिलता है तथा उनके लेखन में अतिशयोक्ति एवं धार्मिकता का रंग है।

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि सल्तनत कालीन इतिहासकार एक सामाजिक प्राणी होने के नाते अपने समय, समाज, संस्कार, धर्म व जाति से प्रभावित हैं और उनका यह प्रभाव उनके लेखन पर भी पड़ता है । ऐतिहासिक वस्तुनिष्ठा एक असंभव परिकल्पना है और हांड़ मांस के बने लेखक के व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति मुद्रित पन्नों पर होती है अतः व्यक्तिगत भावनाओं को इतिहास लेखन से अलग कर वस्तुनिष्ठ बनाना एक असंभव प्रयास होगा। इतिहास लेखन व लेखक परिस्थितियों की उपज होता है तथा उस पर समसामयिक परिस्थितियों का प्रभाव स्वभाविक है । एक इतिहासकार सांस्कृतिक एवं व्यक्तिगत दृष्टिकोण से इतिहास की व्याख्या करता है। वह अपनी तथा सामाजिक रूचि के संदर्भ में अतीत के लोगों, उनके कार्यों एवं उपलब्धियों का वर्णन करता है । इतिहासकार मन से कहीं ना कहीं पूर्वाग्रही होता है तथा वस्तुनिष्ठ हो पाना संभव नहीं होता और उसका लेखन वस्तुनिष्ठता की समस्या से ग्रस्त हो जाता है । ओकशार्ट के अनुसार "इतिहासकार का पूर्वाग्रही होना स्वभाविक है अपने पूर्वाग्रही विचारों के कारण इतिहास की एक ही घटना को इतिहासकार भिन्न–भिन्न ढंग से प्रस्तुत करता है।" ऐतिहासिक वस्तुनिष्ठता जटिल है। वर्तमान समय में ऐतिहासिक वस्तुपरकता की आवश्यकता पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है । इतिहासकार को अपनी व्यक्तिगत रूचि के अनुरूप वस्तुनिष्ठता को त्याग कर वर्णन नहीं करना चाहिए। इतिहासकार के सामने समस्या आती है कि वह ऐतिहासिक वर्णन के समय निष्पक्ष कैसे बना रहे। इतिहास अतीत की घटनाओं का अध्ययन है जिसे प्रत्येक इतिहासकार अपने मत व दृष्टिकोण से प्रस्तुत करता है। प्रत्येक युग का इतिहासकार अपने समय की आवश्यकता अनुसार ही इतिहास लिखता है। समयानुसार समाज, राष्ट्र, व्यक्ति, की आवश्यकताओं व मान्यताओं में परिवर्तन होता रहता है। इस परिवर्तनशीलता के कारण भी इतिहास में वस्तुपरकता संभव नहीं हो पाती। एडवर्ड मेयर एवं जे एस राविन्स का मत है कि "ऐतिहासिक साक्ष्य व तथ्यों को अपने युग की आवश्यकता अनुसार प्रस्तुत किया जाता है एवं इतिहास लेखन में समसामयिक सामाजिक आवश्यकता की प्रधानता रहती है। इसी कारण एक ही तथ्य की उपयोगिता व अनुपयोगिता विभिन्न युगों में बदलती रहती है जिससे वस्तुनिष्ठता की समस्या उत्पन्न होती है।" इतिहासकार के धर्म एवं जाति का प्रभाव भी उसके लेखन पर दिखाई देता है वह चाहते हुए भी स्वयं को इससे मुक्त नहीं कर पाता । सल्तनत कालीन इतिहासकार अपने धार्मिक दृष्टिकोण से प्रभावित इतिहास लिखते हैं जैसे जियाउद्दीन बरनी तारीख ए फिरोजशाही एवं फतवा ए जहां दारी में अपने धार्मिक दृष्टिकोण को ही प्रस्तुत करता है। वॉल्स ने भी लिखा है कि "इतिहासकार के लिए अपने व्यक्तिगत पूर्वाग्रहों से निकलकर लेखन करना असंभव है।" वस्तुनिष्ठ ज्ञान स्थान व समय के प्रभाव से मुक्त होता है फिर भी वैज्ञानिक वस्तुनिष्ठता की भांति ऐतिहासिक वस्तुनिष्ठता की कल्पना "एक स्वप्न मात्र" है क्योंकि इतिहासकार में निष्पक्षता का भाव, समसामयिक परिस्थितियों का प्रभाव, समाज की आवश्यकता, धर्म एवं जाति का प्रभाव ,पूर्वाग्रह भावना, मानवीय भावनाओं की प्रधानता, व्यक्तिगत भावना व दृष्टिकोण का प्रभाव होता है जिनके कारण इतिहास लेखन में वस्तुनिष्ठता कल्पना मात्र है। किसी भी इतिहासकार द्वारा वस्तुनिष्ठता का दावा करना भूल है इतिहासकार का पूर्वाग्रह तो उसी समय स्पष्ट हो जाता है जब वह अपनी रुचि तथा दृष्टिकोण के अनुसार वर्ण विषय का चयन करता है और विषय चयन के पश्चात अपनी रूचि के अनुसार तथ्यों का चयन करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. कॉलिंगवुड–दि आइडिया आफ हिस्ट्री
2. अतहर अब्बाव रिजवी– आदी तुर्ककालीन भारत
3. हरमन शिलर–अवर ह्यूमन ट्रुथ दि नेशन एंड वैल्यू ऑफ यूनिवर्सल हिस्ट्री
4. कौलेश्वर राय–इतिहास दर्शन
5. पी गार्डिनर–दि नेचर ऑफ हिस्टोरिकल एक्लोनेशन
6. डोनाल्ड बी गेरोन्सक–हिस्ट्री मीनिंग एंण्ड मैथड
7. वाल्श– ऐन इन्ट्रोडक्सन टू फिलासफी आप हिस्ट्री
8. झारखंड चौबे– इतिहास दर्शन
9. ई एच कार–इतिहास क्या है।
10. इलियट एंण्ड डाउसन–हिस्ट्री आफ द इंडिया एज टोल्ड बाई इट्स ओन हिस्टोरियन्स
11. प्रोफेसर के ए निजामी–एन हिस्ट्री एंड हिस्ट्रोरियन्स आप मेडिवल इन्डिया
12. ए बी एम0 हबीबुल्ला–फाउंडेशन आफ मुस्लिम रूल इन इंडिया
13. पी0 हार्डी–हिस्ट्रोरियंस आफ मिडिवल इंडिया
14. कालिंवुड द्वारा संदर्भित –आल हिस्ट्री इज कन्टमपरेरी हिस्ट्री
15. राधेशरण–मध्यकालीन भारत की सामाजिक संरचना
16. जी पी गूच–द हिस्ट्री एंड हिस्टोरियंस आंफ नाइटीन्थ सेंचुरी
17. बुद्ध प्रकाश–इतिहास दर्शन
18. गोविंद चन्द्र पांडेय–इतिहास स्वरूप एवं सिद्धांत
19. हेरम्ब चतुर्वेदी– सल्तनतकालीन प्रमुख इतिहासकार